ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(8): 824-827
www.allresearchjournal.com
Received: 26-05-2015
Accepted: 29-06-2015

विशाल कुमार झा
ब्लॉक नं.-21, ल्पॉट नं.-164
प्रेमचन्द्र मार्ग, राजेन्द्र नगर
पटना, बिहार, भारत

Corresponding Author:
विशाल कुमार झा
ब्लॉक नं.-21, ल्पॉट नं.-164
प्रेमचन्द्र मार्ग, राजेन्द्र नगर
पटना, बिहार, भारत

विप्रलम्भ शृङ्गार

विशाल कुमार झा

प्रस्तावनाः

यह दो प्रकार होता है -

1. प्रेमोत्पत्ति के उपरान्त और सम्भोग के पहले। इसे अभिलाष या पूर्वराग कहा जाता है। यह आयोग विप्रलम्भ की संज्ञा से अभिहित है।
   भानुदत्तकृत रसमंजरी में रस के तीन भेद किये गये हैं- आयोग, विप्रयोग और सम्भोग।
2. सम्भोग के अनन्तर। द्वितीय विप्रलम्भ चार प्रकार के होते हैं - (क) एक देश में स्थित रहते हुए भी एक के प्रेम न होने के कारण, दैव-प्रतिबन्ध से या गुरु लज्जा इत्यादि कारणों से जहाँ संयोग न हो सके। इसे विरह विप्रलम्भ कहा जाता है। (ख) मान के कारण जहाँ असम्भोग हो। मान या तो प्रणय की सामान्य प्रवृत्ति के कारण होता है क्योंकि रूठना प्रेम का स्वभाव है। या तो प्रियतम के अपराध के कारण इसकी उत्पत्ति होती है। इस विप्रलम्भ को मान-विप्रलम्भ की संज्ञा दी जाती है। (ग) जहाँ अनुराग होते हुए भी कार्यवश विभिन्न देशों में निवास हो। यह प्रवास विपलम्भ है और (घ) शाप के कारण जहाँ विप्रलम्भ हो उसे शाप-विप्रलम्भ कहा जाता है।

''प्रमार्द्राः प्रणयस्पृशः परिचयादुद्गाढरागोदया-
स्तास्ता मुग्धदृशो निसर्गमधुराश्चेष्टा भवेयुर्मयि।
यास्वन्तः करणस्य बाह्यकरणव्यापारोधीक्षणा-
दाशंसापरिकल्पितास्वपि भवत्यानन्दसान्द्रो लयः।।''

मालती भोले-भाली नेत्रों वाली है। मेरी आकांक्षा है किउसकी विभिन्न प्रकार की सारी चेष्टाएँ मेरे विषय में ही हो। वे चेष्टाएँ प्रेम की सरसता से मानी हुई हों, प्रणय का स्पर्श करनेवाली हो। मेरा उसका इतना परिचय बढ़ जाय और हमारी इतनी घनिष्ठता हो जाय कि उसकी प्रत्येक चेष्टा में बढ़े-चढ़े अनुराग की अभिव्यक्ति होने लगे तथा उन चेष्टाओं में स्वाभाविक मधुरता हो।
यहाँ मालती आलम्बन, विलास स्मरण उद्दीपन, आशंसा अनुभाव, उत्कण्ठा व्यभिचारीभाव, रति स्थायीभाव है। इस प्रकार यह विप्रलम्भ शृङ्गार ध्वनि का उदाहरण है।
अभीतक माधव का माली से सम्मिलन नहीं हो सका है। अतः यह रति अभिलाष अवस्था में ही स्थित है और अभिलाष विप्रलम्भ शृङ्गार की व्यञ्जक हो गई है।

विरह हेतुक विप्रलम्भ का उदाहरण-

''अन्य ब्रजतीति का खलु कथा नाट्यस्य तादृक् सुहृत्
यो मां नेच्छति नागतश्च हहहा कोऽयं विधेः प्रकनः।
इत्यल्पेतरकल्पनाकवलितस्वान्ता निशनतान्तरे
बाला वृत्तविवर्तन व्यतिकरा नाप्नोति निद्रां निशि।।''

यह विरहोत्कण्ठिता है।

''अन्यत्र जाता है, इसकी निस्सन्देह बात ही क्या? इस प्रकार का इसका कोई मित्र भी नहीं जो मुझे न चाहता हो, खेद है कि फिर भी नहीं आया, यह कैसा ब्रह्मा का नवीन आरम्भ है? इस प्रकार शय्यागृह के अन्दर अधिक कल्पनाओं से ग्रस्त अन्तः करणवाली, करवटों की घटित घटनावाली बला रात में नींद नहीं प्राप्त कर पाती है। संक्षेप में शृङ्गार रस वर्णित है।

हास्य रस -

भरत ने सर्वजनसंवेद्य तथा हृद्य होने के कारण शृङ्गार को प्रथम स्थन दिया है। तदनुगामी होने के कारण हास्य रस को द्वितीय स्थान दिया है। भरत ने हास्य रस छः प्रकार का माना है - स्मित, हसित, विहसित, अपहसित, अवहसित और अतिहसित।

- नाट्यशास्त्र अध्याय - 6

विकृत वाणी, आकार, चेष्टा वाले जिस व्यक्ति को देखकर या उसकी बातें सुनकर हँसी आती है वह हास्य रस का आलम्बन होता है, उसकी चेष्टा में उद्दीपन होता है। आँख सिकोड़ना, मुस्कुराना इत्यादि अनुभाव होते हैं। निद्रा, आलस्य, अवहित्था इत्यादि संचारीभाव होते हैं। इनसे पुष्ट होकर हास स्थायीभाव हास्य रस का रूप धारण करता है।

हास्य रस का उदाहरण -

''आकुञ्च्य पाणिमशुचिं मम मूर्ध्नि वेश्या-
मन्त्राम्भसां प्रतिपदं पृषतैः पवित्रे।
तारस्वनं प्रथितथूत्कमदात्प्रहारं हा हा-
हतोऽहमिति रोति विष्णुशर्मा।।''

''अपने अपवित्र हाथ को कुछ सिकोड़ कर मन्त्रजल के बिन्दुओं से प्रत्येक अवयव में पवित्र मेरे सर पर जोर की आबाज में 'थू' की आवाज को बढ़ाकर प्रकार कर दिया। अरे-अरे मैं तो मारा गया, यह कहकर विष्णुशर्मा रो रहा है।''

'विष्णु शर्मा जोर-जोर से रो रहा है। वह कह रहा है, मैंने मन्त्र पढ़कर, जल की बूंदें छिड़क-छिड़क कर अपने सर का पवित्र किया है। इस वेश्या ने अपने अपवित्र हाथ का सिकोड़क, मुक्का बनाकर मेरे पवित्र मस्तक पर जोर से प्रहार किय और उसक थू के शब्द से उसकी थू की बूंदे मेरे सर पर गिर गई। हाय हाय! मैं तो मारा गया।' यहाँ विष्णुशर्मा आलम्बन, रोना उद्दीपन, हँसने वालों के स्मित हसित इत्यादि अनुभाव हैं।

आवेग चपलता इत्यादि संचारी भाव हैं। इनसे पुष्ट होकर हास स्थायी ने हास्य रस का रूप धारण किया है। हास्य रस में प्रायः परिशीलक ही आश्रय होता हैं।

करुण रस -

''इष्टनाशादनिष्टाप्तेः करुणाख्यो रसो भवेत्।
धीरैः कपोतवर्णोऽयं कथितो यमदैवतः।।'' - सा.द. परिच्छेद 3/222

'करुण रस' वह रस है जिसे शोकरुप स्थायिभाव का पूर्णभिव्यञ्जन कहा गया है। इसका आविर्भाव इष्टनाश और अनिष्ट-प्राप्ति से अम्भव है। इसका वर्ण कपोतवर्ण है और इसके देवता 'यम' हैं। इसका स्थायीभाव 'शोक' है।

विनष्ट व्यक्ति इसक आलम्बन है। दाह कर्म की गणना इसके उद्दीपन वर्ग में होती है। दैवन्दिन, भूमिपतन, क्रन्दन, वैवर्ण्य, उच्छ्वास, निश्वास, स्तम्भ, प्रलपन आदि आदि इसके अनुभाव हैं। साथ ही साथ निर्वेद, मोह, अपस्मार, व्याधि, ग्लानि, स्मृति, श्रम, विषाद, जड़ता, उन्माद और चिन्ता आदि इसके व्यभिचारीभाव हैं।

राघविलास में कहा गया है-

''विपिने क्व जटानिबन्धनं तवचेदं क्व मनोहरं वपुः।
अनयोर्घटना विधेः स्फुटं ननु खड्गेन शिरीषकर्त्तनम्।।''

''कहाँ तुम्हारा कोमल शरीर और कहाँ तुम्हारा वन में जटाजूट का कठोर बन्धन। इन दोनो का मेल विधि विडम्बना है। यह तो ऐसा है जैसे तलवार से शिरीष के फूल का काटना।'' यहाँ राम के वनवास से शोकाकुल दशरथ का दैव-निन्दन वर्णित है इसी भाँति बन्धु-वियोग, वित्तनाश आदि-आदि से आविर्भूत करुण के उदाहरण द्रष्टव्य है।

महाभारत के स्त्री पर्व में करुण रस का परिपोष प्राप्त होता है। करुण रस ही एकमात्र रस है और अन्य रस इसी के विवर्त है- यह 'करुणरसवाद' महाकवि भवभूति का रसवाद है जैसा कि निम्न श्लोक में स्पष्ट है।

''एका रसः करुण एव निमित्तभेदाद
भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान्।
आवर्तबुद्बुदतरङ्गमयान् विकास-
नम्भो यथा सलिलमेव तु तत्समस्तम्।।''
रौद्र रस-

जिसका स्थायीभाव 'क्रोध' है, जिसका वर्ण रक्त है, जिसके देवता रुद्र हैं वह 'रौद्र रस' है। यहाँ आलम्बन रूप से शत्रु का वर्णन किया जाता है और शत्रु की चेष्टाएं उद्दीपन विभाव का कार्य काती है। इसकी विशेष उद्दीप्ति मुष्टि प्रहार, भूतापन, भयंकर काटमार, शरीर-विदारण, संग्राम और सम्भ्रम आदि-आदि से होती है। इसके अनुभाव हैं- भ्रूभङ्ग, ओष्ठनिदर्शन, बाहुस्फोटन, तर्जन, स्वकृतवीरकर्म वर्णन, शस्त्र का उत्क्षेपन, उग्रता, आवेश, रोमाञ्च स्वेद, कम्प, मद, आक्षेप, क्रूरदृष्टि आदि इसके व्यभिचारी भाव हैं, उनमें मोह अमर्ष आदि का स्थान है।

उदाहरणार्थ वेणी संहार में अश्वत्थामा के क्रोध का वर्णन -

''कृतमनुमतं दृष्टं वा यैरिदं गुरुपातकं
मनुजपशुभिर्निर्मर्यादैर्भवद्भिरुदायुधैः।
नरकरिपुणा सार्द्धं तेषां सभीमकिरीटिना
मयमहमसृद्मेदोमांसैः करोमि दिशां बलिम्।।''

पाण्डव वीरो! कुरु प्रवीरो! अभी अभी देख लो कि कृष्ण, भीम, अर्जुन और उन-उन निर्मर्याद्, शस्त्रधारी नरपशुओं के रक्त, चर्बी और मांसा के लोथड़ों से जिन्होंने यह द्रेणवधरूप महापाप किया था इस घोर पातक में राय दी या इस कुकर्म के साक्षी बने, कैसे दिशाओं की बलि चढ़ा देता हूँ।

रौद्र के स्थायीभाव 'क्रोध' का यह स्वरूप विवेक है-

''तेजसो जनकः क्रोधः समिधा कथ्यते बुधैः।
क्रोधः कोपश्च रोषश्चेत्येष भेदास्त्रिधा मतः।। भावप्रकाश - 24 अधिकार

वीर रस -

यह रस उत्तम प्रकृति का माना गया है। इसके आवलम्बन विजेतव्य इत्यादि होते हैं। भरत ने इसकी उत्पत्ति असम्मोह, अध्यवसाय, नय, बल, पराक्रम, शक्ति, प्रताप, प्रभाव इत्यादि विभावों से मानी है। विजेतव्य की चेष्टा इस रस का उद्दीपन होती है। इसमें सहायान्वेषण इत्यादि अनुभाव होते हैं। भरत ने स्थैर्य, त्याग, वैशारद्य इत्यादि अनुभाव माने हैं। यहाँ सञ्चारीभाव धृति, मति, गर्व, आवेग, औग्र्य, अमर्ष, स्मृति इत्यादि होते हैं और उनसे पृष्ट होकर उत्साह स्थायीभाववीर रस का रूप धारण करता है।

उत्साह का सामान्य लक्षण है, किसी महान् उद्देश्य के लिए कष्ट और हानि में आनन्दानुभव करना। यह अनेक प्रकार हाक सकता है किनतु आचार्य परम्परा केवल चार प्रकार के उत्साह की ही रसता प्राप्ति मानती है। इस प्रकार वीर रस चार प्रकार का होता है- दानवीर, धर्मवीर, दयावीर और युद्धवीर।

हनुमन्नाटक के ग्यारहवें अङ्क से उद्धृत श्लोक इसका उदाहरण है - मेघनाद युद्धभूमि में वानम प्रभृति वीरों को सम्बोधित करता हुआ कहता है -

''युद्ध-भूमि में विद्यमान वानरों! तुम सभी तुच्छ हो, तुझे डरने की आवश्यकता नहीं। मेरे ये बाद इन्द्र के मदमस्त हाथी ऐरावत के समस्त को चूर्ण करनेवाले हैं। इन बाणों को तुम्हारे तुच्छ और निर्बल शरीरों पर गिरने में अत्यधिक लज्जा प्रती होगी।

लक्ष्मण तुम भी रुको - तुम इस योग्य ही नहीं हो कि तुम्हारे ऊपर क्रोध किया जाय। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि मैं मेघनाद हूँ। मेरी शक्ति का प्रभाव अखिलविश्व में प्रथित है। मुझे इन्द्रजित् कहलाने में गौरवा नहीं मिलता है। मैं तो राम का अन्वेष्ण कर रहा हूँ। कहा जाता है कि जिन्होंने अपने तुच्छ भू-भङ्ग के निक्षेप से समुद्र को नियन्त्रित कर दिया है।

''क्षुद्राः सन्त्रासमेते विजहत हरयः झुण्णशक्रेभकुम्भा
युष्मद्देहेषु लज्जां दधति परमयी सायका निष्पतन्तः।
सौमित्रे तिष्ठ पात्रं त्वमसि नहि रुषां नन्वहं मेघनादः
किञ्चद् भूभङ्गलीलानियमितजलाधिं राममन्वेषयामि।।''

यहाँ राम आलम्बन हैं, समुद्रबन्धन उद्दीपन है, क्षुद्रों की उपेक्षा और राम की प्रतिस्पर्धा अनुभाव है। ऐरावत के कुम्भ-भेदन की स्मृति और गव्र सञ्चारीभाव हैं, उत्साह स्थायीभाव हैं इस प्रकार यहाँ वीर रस ध्वनि है। युद्धविषयक उत्साह होने से यह युद्ध वीर कहा जा सकता है।

भयानक रस

जिससे भस हो वह आलम्बन होता है। उसकी घोर चेष्टाएँ उद्दीपन होती है। वैवर्ण्य गद्गद स्वर भाषण, पुलक, स्वेद, रोमाञ्च, कम्प, दिक्प्रेक्षण इत्याद अनुभव होते हैं। जुगुप्सा, आवेग, सम्मोह, संत्रास, ग्लानि, दीनता, शङ्का, अवस्मार, सम्भ्रान्ति, मृत्यु इत्यादि व्यभिचारी भाव होते हैं। इनसे पुष्ट होकर भय स्थायीभाव भयानक रस का रूप धारण करता है।

प्रस्तुत पद्य 'अभिज्ञानशाकुन्तल' से उद्धृत भयानक रस का उदाहरण है।

''ग्रीवाभङ्गभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टः
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्।
दर्भैरर्धावलीढैः श्रवविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा
पश्योदगुप्लुतत्वद्वियति बहुतरं स्तोकमूर्व्यां प्रयाति।।''

पीछे दौड़ते हुए रथ पर बार-बार अपनी सुन्दर गर्दन मोड़कर सुदृष्टि डालता हुआ, बाण लगने के भय से अपने पिछले विपुल भाग को शरीर के अगले भाग में समेटता हुआ और भ्रम के कारण खुले हुए मुँह से गिरने वाले अर्द्धचर्वित कुशों से मार्ग को व्याप्त करता हुआ लम्बी छलांग भरने के कारण आकाश में अधिक और पृथ्वी पर कम चल रहा है।

- अ. शा. 1/17

यहाँ पीछे जाने वाला स्यन्दनारूढ राजा दुष्यन्त आलम्बन है। शतपतन की सम्भावना उद्दीपन है।

ग्रीवाभङ्ग, पलायन इत्यादि अनुभाव है शङ्क, त्रास, श्रम इत्यादि व्यभिचारी भाव हैं, भय स्थायी भाव हैं। इनसे यहाँ भयानक रस-ध्वनि होती है।

बीभत्स रस -

भयानक और बीभत्स के विभाव प्रायः मिलते-जुलते हैं तथा दोनों में आलम्बन से विमुखता साधारण धर्म हैं और भयानक के बाद बीभत्स का उपादन होता है। दुर्गन्धयुक्त मांस-मेदा इत्यादि आलम्बन होते हैं। उसमे कीड़े पड़ना इत्यादि उद्दीपन होते हैं। भूकना, मुँह घुमाना, नेत्र संकोच इत्यादि अनुभाव हैं। मोह, अपस्मार, आवेग इत्यादि सञ्चारी भाव और जुगुप्सा स्थायीभाव हैं।

'मालतीमाधव' से इसका उदाहरण लिया गया है। 'माधव मांस खते हुए प्रेत को देखकर कहते हैं - इस दरिद्र प्रेत ने पहले तो शव की खाल इधर-उधर फाड़ डाली, पुनः उसके जो फूले हुए अवयव थे- कंधे, नितम्ब, पीठ की पिण्डी इत्यादि अवयवों का जहाँ मोटा-तगड़ा मांस मिल सकता था पहले खा लिया। उस मांस से बड़ी तेज दुर्गन्ध

उठ रही थी। अब इसने शव को अपने अङ्क में ले लिया है। अब जो ऐसे अवयव रह गये, जहाँ मांस कम मिलता है और हड्डियों के जाल में जो मांस चिका रह गया है उन स्थानों से तथा खोपड़ी के अन्दर से नोच-नोच कर कच्चा मांस खा रहा है। इस काम में वह अपनी दृष्टि यत्र-तत्र डालता है और मांस के छिनने के भय से हड्डियों में चिपके मांस को देखता है तथा मांस निकालने में इसके दांत प्रकट हो जाते हैं। भूख के कारण यह बहुत दु:खी प्रतीत होता है।

यहाँ शव या प्रेत रङ्क आलम्बन है। मांस का नोचना उद्दीपन है। देखनेवाले का नाक सिकाड़ना, थूकना, सिर हिलाना अनुभाव हैं। उद्वेग इत्यादि व्यभिचारी भाव हैं। जुगुपसा स्थायी भाव है। इस प्रकार यहाँ वीभत्स रस की ध्वनि होती है। पण्डितराज जगन्नाथ के अनुसर यद्यपि रति, क्रोध, उत्साह, भय, शोक, विस्मय और निर्वेद के समान हास और जुगुप्सा में आलम्बन और आश्रय दोनों ही प्रतीत नहीं होते किन्तु इन दोनों में आश्रय का आक्षेप कर लिया जाता है और इस प्रकर रसास्वादन होने लगता है।

'उत्कृत्योत्कृत्य कृत्ति प्रथममणि पृथूत्सेधभूयांसिमांसा-
न्यंस्यस्फिक्पृष्ठपिण्ड्याद्यवयवसुलभान्युग्रपूतानि लग्ध्व।
आर्त: पर्यस्तनेत्र: प्रकटितदशन: प्रेतरङ्क करङ्क-
दङ्कस्यादस्थिसंस्थं स्थपुटगतमपि क्रव्यमव्यग्रमति।।
चित्रं महानेषवतावतार: क्व कान्तिरेषाभिनवैव भङ्गि।
लोकोत्तरं धैर्यमहो प्रभाव: काप्याकृतिर्नूतन एस सर्ग:।।
- का.प्र. उल्लास - 4/29/44

अद्भुत रस -

इसका स्थायीभाव विस्मय है। इसकी उत्पत्ति दिव्य-जनदर्शन, ईप्सित मनोरथप्राप्ति, माया, इन्द्रजाल की सम्भावना इत्यादि विभावों से होती है। साहितयदर्पण 3/23 में कहा गया है -

''अद्भूतो विस्मयस्थायिभावो गन्धर्वदेवत:।
पीतवर्णो वस्तु लोकातिगमालम्वनं मतम्।।
गुणानां तस्य महिमा भवेदुद्दीपनं पुन:।
स्तम्भ: स्वेदोऽथ रोमाञ्चगद्गदस्वरसम्भ्रमा:।।
तथा नेत्रविकासाद्या अनुभाव: प्रकीर्तिता।
वितर्कावेगसम्भ्रान्तिहर्षाद्या व्यभिचारिण:।।''

लोकातिक्रान्त वस्तु आलम्बन होती है। इसके गुणों की महिमा उद्दीपन होती है, स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, गद्गदस्वर, सम्भ्रम, नेत्रविकास इत्यादि अनुभाव हैं, वितर्क, आवेग, सम्भ्रम, हर्ष इत्यादि व्यभिचारी भाव होते हैं।